का विधान है। चूँकि हम सब पाप और उसके परिणामों के बोझ तले दबे हैं, उपवास उस अस्त्र रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत किया जाता है जिसके द्वारा हम ईश्वर के साथ मैत्री को पुनः स्थापित कर सकते हैं। एज़्रा के साथ यही हुआ, जिसने, निर्वासन से प्रतिज्ञात भूमि तक की यात्रा की तैयारी में, एकत्र लोगों से उपवास का आग्रह किया ताकि "हम अपने ईश्वर के सामने दीन बनें" (एज़्रा का ग्रन्थ 8:21)। सर्वशक्तिमान् ने उनकी सुनी तथा उन्हें अपने अनुग्रह एवं सुरक्षा का आश्वासन दिया। इसी प्रकार, पश्चाताप हेतु योना के आव्हान का प्रत्युत्तर देते निनिवेह के लोगों ने अपनी निष्कपटता के चिन्ह रूप में उपवास की घोषणा की और बोलेः "क्या जानें ईश्वर द्रवित हो जाये, उसका क्रोध शान्त हो जाये और हमारा विनाश न हो?" (योना का ग्रन्थ 3,9)। इस अवसर पर, भी, ईश्वर ने उनके कार्यों को देखा तथा उनका विनाश नहीं किया।

नवीन व्यवस्थान में, येसु, उन फरीसियों के व्यवहार की निन्दा कर, उपवास के गहन अर्थ को प्रकाश में लाते हैं जो बडी सावधानी के साथ विधान का तो पालन करते थे किन्तु जिनके हृदय ईश्वर से बहुत दूर थे। यथार्थ उपवास, जैसा कि प्रभु ने अन्य अवसरों पर भी कहा है, स्वर्गिक पिता की इच्छा को पूरा करने में है, जो, "अदृश्य को भी देखता और तुम्हें पुरस्कार देता है" (मत्ती 6:18)। येसु खुद हमारे समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, उजाड़ प्रदेश में चालीस दिन व्यतीत करने के बाद वे शैतान से कहते हैं: "मनुष्य रोटी से नहीं जीता बल्कि ईश्वर से निकलनेवाले हर शब्द से जीता है" (मत्तीः4,4)। इस प्रकार यथार्थ उपवास का अर्थ है यथार्थ भोजन करना है और वह है ईशइच्छा का पालन (योहनः 4,34)। अस्तु, यदि आदम ने ईश्वर के इस आदेश को भंग किया कि "तुम भले और बुरे का ज्ञान करानेवाले वृक्ष के फल नहीं खाओगो", तो प्रभु में विश्वास करनेवाला, उपवास के द्वारा, ईश्वर की दयालुता एवं करुणा पर भरोसा रखते हुए, दीनतापूर्वक स्वतः को ईश्वर के आगे समर्पित करने का मनोरथ रखता है।

उपवास की क्रिया आरम्भिक कलीसिया में बहुत प्रचलित थी (प्रेरित चरित-13,3; 14,22; 27,21; 2 कुरिन्थियों- 6,5)। कलीसिया के आचार्य भी पाप पर विजय पाने और, विशेष रूप से, "पुराने आदम" के लोभ का परित्याग करने के लिये, उपवास की बात करते तथा विश्वासी के हृदय में ईश्वर की ओर जानेवाले एक मार्ग को प्रशस्त करते हैं। इसके अतिरिक्त, उपवास ऐसी क्रिया है जिसका इस्तेमाल तथा जिसका सुझाव प्रत्येग युग के सन्तों ने दिया है। सन्त पेत्रुस क्रिसोलोगुस लिखते हैं –"उपवास प्रार्थना की आत्मा है और दया उपवास का जीवनरक्त। इसलिये यदि तुम प्रार्थना करते हो तो उपवास करो, दया दिखाओ; यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारी याचना सुनी जाये तो अन्यों की याचनाओं को सुनो। यदि तुम दूसरों के प्रति अपने कान बन्द नहीं करोगे तो तुम अपने लिये ईश्वर के कान खोल दोगे" (प्रवचन 43: पृ.52, 320. 322)।

हमारे अपने युग में, ऐसा प्रतीत होता है कि उपवास ने अपने कुछ आध्यात्मिक मतलब को खो दिया है तथा स्वतः पर उस संस्कृति को हावी कर लिया है जिसकी विशिष्टता भौतिक तन्दुरुस्ती की खोज है, शरीर की देखरेख के लिये जिसका चिकित्सीय महत्व है। उपवास, निश्चित रूप से, शारीरिक कल्याण लाता है, किन्तु विश्वासियों के लिये, यह सर्वप्रथम, उस घाव का उपचार है जो

उन्हें ईश्वर की इच्छा को पूरा करने से रोकता है। सन् 1966 ई. में प्रकाशित अपने प्रेरितिक संविधान *Paenitemini* में प्रभु सेवक पौल षष्टम् ने प्रत्येक ख्रीस्तीय की बुलाहट के अन्तर्गत उपवास की प्रस्तावना करनी चाही ताकि वह "केवल अपने लिये ही नहीं जिये बल्कि उसके लिये जो उससे प्यार करता है तथा जिसने उसके लिये स्वतः का बलिदान कर दिया है.........उसे अपने भाइयों के लिये भी जीना होगा"। चालीसाकाल उक्त प्रेरितिक संविधान में निहित नियमों की पुनर्प्रस्तावना का सुअवसर हो सकता है ताकि इस दीर्घ काल से चली आ रही इस प्रथा के यथार्थ एवं चिरस्थायी महत्व की पुनर्खोज की जा सके और इस प्रकार हमें अपने अहंकार का दमन करने में सहायता दे तथा ईश्वर एवं पड़ोसी प्रेम के प्रति हमारे हृदयों को उदार बनायें, जो नये विधान की पहली एवं महत्तम आज्ञा को साथ साथ सम्पूर्ण सुसमाचार का सार है (मत्तीः 22, 34-40)

इसके अतिरिक्त, निष्ठापूर्वक किया गया उपवास व्यक्ति के शरीर एवं उसकी आत्मा की अखण्ड एकता में योगदान देता है जिससे पाप का बहिष्कार करने तथा प्रभु के साथ घनिष्ठता में विकास करने हेतु सहायता मिलती है। सन्त अगस्टीन जो अपने नकारात्मक मनोवेगों से भली भाँति परिचित थे तथा जिन्हें वे "मुड़ी हुई गाँठें" कहकर परिभाषित करते थे, लिखते हैं: "मैं, निश्चित्त रूप से, कष्ट को आरोपित करूँगा, किन्तु यह इसलिये क्योंकि वह मुझे क्षमा करेगा, उसकी दृष्टि में प्रीतिकर होने के लिये, ताकि, मैं, उसकी आनन्दप्रदता में आनन्द मना सकूँ" 9प्रवचन 400, 3, 3: पृ.40, 708)। हमारे शरीर को पोषण प्रदान करनेवाले भौतिक भोजन का परित्याग ख्रीस्त को सुनने एवं मुक्तिदायी वचन से पोषित होने के लिये हमें आन्तरिक रूप से तैयार करता है। उपवास एवं प्रार्थना द्वारा, हम उन्हें अपने अन्तर में प्रवेश करने देते तथा अपने अस्तित्व की गहराई में, ईश्वर के लिये, व्याप्त क्षुधा एवं तृष्णा को तृप्त करने का मौका देते हैं।

साथ ही साथ, उपवास, विभिन्न परिस्थितियों के प्रति आँखें खोलने में सहायक होता है, जिसमें हमारे अनेक भाई बहन जीवन यापन के लिये बाध्य हैं। अपने प्रथम पत्र में सन्त योहन चेतावनी देते हैं: "किसी के पास दुनिया की धन दौलत हो और वह अपने भाई को तंगहाली में देखकर उस पर दया न करे, तो उसमें ईश्वर का प्रेम कैसे बना रह सकता है?" (3,17)। स्वैच्छिक उपवास, हमें, पीड़ित भाई की सहायता हेतु झुकनेवाले, भले समारी की भावना में विकसित होने की क्षमता प्रदान करता है (प्रेरितिक पत्रः ईश्वर प्रेम है, 15)। दूसरों की ख़ातिर, स्वेच्छा से, आत्मत्याग कर हम इस बात की पुष्टि करते हैं कि ज़रूरत में पड़े हमारे भाई एवं बहन अजनबी नहीं हैं। अपने भाइयों एवं बहनों के प्रति आथितेय के इसी भाव को सजीव रखने के लिये, मैं, पल्लियों एवं प्रत्येक अन्य समुदाय को चालीसाकाल के दौरान निजी एवं सामुदायिक उपवास, ईश वचन के पाठ, प्रार्थना एवं भिक्षादान को सघन करने के लिये प्रोत्साहन देता हूँ। आरम्भ ही से ये क्रियाएँ ख्रीस्तीय समुदायों की पहचान रही हैं जिनमें विशेष अनुदान एकत्र किये जाते थे (2 कुरिन्थियों 8-9; रोमियों 15, 25-27), विश्वासियों को आमंत्रित किया जाता था कि जो कुछ उनके उपवास से बचा रह गया था उसे वे ग़रीबों में बाँट दें (*Didascalia Ap., V, 20,18*)। हमारे युग में और, विशेष रूप से, धर्म विधि सम्बन्धी चालीसाकाल में इस क्रिया की पुनर्खोज करना तथा इसके लिये लोगों को प्रोत्साहन देना आवश्यक है।

अब तक जो कुछ मैंने कहा है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि उपवास एक महत्वपूर्ण तापसिक क्रिया है, हमारे, हर सम्भव, अस्त व्यस्त व्यहवहार के विरुद्ध संघर्ष हेतु एक आध्यात्मिक अस्त्र है। भोजन तथा अन्य भौतिक वस्तुओं के आनन्द के प्रति स्वेच्छा से चुनी गई निर्लिप्तता, आदि पाप से दुर्बल हुई, प्रकृति की भूख पर नियंत्रण रखने में ख्रीस्त के अनुयायी की मदद करती है जिसके नकारात्मक प्रभाव समग्र मानव व्यक्ति पर अपनी छाप छोड़ते हैं। सुयोग से, चालीसाकालीन धर्म विधि के एक प्राचीन भजन का आव्हान हैः "हम संयम से शब्दों, खान-पान, शयन एवं मनोरंजन का उपयोग करें। अपनी इन्द्रियों की देखरेख करने में हम सावधानी बरतें।"

अति प्रिय भाइयो एवं बहनो, यह देखना उत्तम होगा कि उपवास का अन्तिम लक्ष्य किस तरह हममें से प्रत्येक की सहायता करता है, जैसा कि प्रभु सेवक सन्त पापा जॉन पौल द्वितीय ने लिखा है, ईश्वर के लिये स्वतः को पूर्ण बलिदान बनाना (विश्व पत्र *Veritatis splendor,* 21)। अस्तु, प्रत्येक परिवार एवं ख्रीस्तीय समुदाय, आत्मा को विभ्रान्त करने वाले सभी तत्वों को दूर रखने तथा उसे पोषित करनेवाले तत्वों में विकास कर, ईश्वर एवं पड़ोसी प्रेम की ओर अग्रसर करने हेतु, चालीसाकाल का उपयोग करे। इस स्थल पर मैं प्रार्थना, धर्मग्रन्थ पाठ, पुनर्मिलन संस्कार तथा यूखारिस्त और, विशेष रूप से, रविवारीय यागों में सक्रिय भागीदारी के प्रति महत्तर प्रतिबद्धता पर विचार कर रहा हूँ। इस आन्तरिक मनोवृत्ति के साथ, हम सब चालीसा काल की भावना में प्रवेश करें। हमारे आनन्द का कारण बनी, धन्य कुँवारी मरियम, पाप की दासता से अपने हृदयों को मुक्त करने के प्रयास में हमारा साथ दें तथा हमें अपना समर्थन प्रदान करें ताकि हम अपने हृदयों को, सदा सर्वदा के लिये, ईश्वर के जीवन्त मन्दिर बना सकें। इन मंगलकामनाओं के साथ, प्रत्येक विश्वासी एवं कलीसियाई समुदाय को फलप्रद चालीसाकाल हेतु अपनी प्रार्थनाओं का आश्वासन देते हुए, मैं, आप सब को अपना प्रेरितिक आशीर्वाद प्रदान करता हूँ।

वेटिकन से, 11 दिसम्बर 2008

हस्ताक्षर
बेनेडिक्ट 16 वें